



कबीरदास: एक उच्चकोटि के मानवतावादी समाज-सुधारक

डॉ. अनुपम सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर (समाजशास्त्र)

लोकमाता अहिल्याबाई होल्कर राजकीय महिला महाविद्यालय, भरपुरा,

अलीगंज, एटा (उ.प्र.)

संपर्क ईमेल: yogendraalld79@gmail.com

1. प्रस्तावना: युगीन परिस्थितियाँ और कबीर का आविर्भाव

जिस समय कबीरदास जी का आविर्भाव हुआ, उस समय भारत में भक्ति आंदोलन की लहर प्रबल थी। हिंदू-मुसलमान समाज में विभिन्न सांप्रदायिक तथा धार्मिक तत्वों के आगमन से तत्कालीन सामाजिक ढांचे पर व्यापक प्रभाव पड़ा। उस समय समाज में जातिगत भेदभाव, सांप्रदायिकता, धार्मिक पाखंड, छुआछूत, ऊँच-नीच और अंधविश्वास जैसी अनेक बुराइयाँ व्याप्त थीं। कबीरदास जी ने इन कुरीतियों को दूर करने के लिए जो मार्ग अपनाया, वैसा किसी अन्य साधु-संत या भजनकार के यहाँ दुर्लभ है। निर्गुण भक्ति कवियों में कबीर जैसा समाज सुधारक एवं मानवतावाद का प्रणेता दूसरा कोई नहीं हुआ। उन्होंने मानव-कल्याण के लिए समन्वयवादी दृष्टि अपनायी और तत्कालीन विसंगतियों को दूर करने का भगीरथ प्रयास किया।

2. साहस और विद्रोह का स्वरूप

कबीरदास जी बाह्य धार्मिक-आडंबरों को अस्वीकार करने का अपार साहस लेकर धर्म-साधना के क्षेत्र में आए। किसी परंपरा को अस्वीकार करना स्वयं में बड़ी बात नहीं है, किंतु जब कोई किसी महान उद्देश्य के लिए स्थापित बाधाओं को चुनौती देता है, तो वह 'वीर धर्म' की श्रेणी में आता है। बिना उद्देश्य के किया गया विद्रोह विनाशकारी होता है, परंतु कबीर का विद्रोह लोक-मंगल की भावना से प्रेरित था।

3. कबीर का संघर्ष और अडिग विश्वास

कबीर ने समाज में व्याप्त अज्ञानता को दूर करने के लिए अत्यंत स्पष्ट और कठोर भाषा का प्रयोग किया। अनेक प्रलोभनों, अज्ञान, काम और क्रोध ने उनके मार्ग में अवरोध पैदा किए, किंतु उन्होंने बड़े धैर्य के साथ सबका सामना किया। उनकी भाषा की कठोरता में उनकी अटूट निष्ठा छिपी है। मध्यकालीन भयावह स्थितियों में समाज को सही मार्ग पर लाने का बीड़ा उठाना किसी सामान्य व्यक्ति के वश की बात नहीं थी; इसके लिए अदम्य साहस और अखंड विश्वास आवश्यक था।

“कबीर खड़ा बाज़ार में, लिए लुकाठी हाथ। > जो घर जारे आपना, चले हमारे साथ॥”

4. मानवतावाद और समन्वयवादी दृष्टि



कबीर यथार्थ रूप में सुख-शांति पूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहते थे, किंतु चारों तरफ धर्म के नाम पर लड़ते-झगड़ते मनुष्य और दुःख-दरिद्रता को देखकर वे स्वयं को भूलकर पीड़ितों के दुःख दूर करने में लग गए। उनका लक्ष्य केवल किसी एक जाति में एकता स्थापित करना नहीं था, अपितु संपूर्ण मानव जाति को समानता के सूत्र में बाँधना था।

मानवतावाद और भक्ति का आविर्भाव कबीर से पहले नारद और शाण्डिल्य के भक्ति-सूत्रों में मिलता है, किंतु वह पुस्तकीय ज्ञान शिक्षित वर्ग तक ही सीमित था। स्वामी रामानंद ने इस विचारधारा को व्यापक बनाया और कबीर ने इसे समाज के धरातल पर उतारा।

5. धार्मिक पाखंड और सामाजिक विसंगतियों पर प्रहार

कबीर ने हिंदू और मुसलमान दोनों धर्मों के खोखलेपन को निकट से देखा। उन्होंने अनुभव किया कि धर्मगुरुओं की कट्टरता ने दोनों समुदायों के बीच एक अभेद्य दीवार खड़ी कर दी है। कबीर ने मुल्ला, पंडित और काजी-सभी को सत्य का मार्ग दिखाया:

“पंडित बाद बदनते झूठा। > दुनिया खाटी खांड मुवा, पावक कह्या दाझै जे कोइ, जोरि कह्या तृषा बुझाई॥”

उनका मानना था कि जन्म से कोई छोटा या बड़ा नहीं होता, व्यक्ति अपने कर्मों से श्रेष्ठ बनता है। हृदय की पवित्रता ही धर्म का मूल है।

6. कुरीतियों का खंडन और भक्ति का स्वरूप

कबीर स्वच्छंदतावादी विचारक थे। उन्होंने मूर्तिपूजा, तीर्थ यात्रा, रोज़ा, नमाज़ और तिलक जैसे बाह्य आडंबरों का डटकर विरोध किया।

• अज्ञान पर व्यंग्य: > “काँकर पाथर जोरि के मस्जिद लई बनाया। > ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय॥”

• मूर्तिपूजा पर प्रहार: > “पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूं पहार। > ताते यह चाकी भली, पीस खाय संसार॥”

• दिखावे की भक्ति पर व्यंग्य: > “माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर। > कर का मनका डारि दे, मन का मनका फेर॥”

• जीव हिंसा का विरोध: > “दिन भर रोज़ा रहत हैं, रात हनत हैं गाय। > यह तो खून वह बंदगी, कैसे खुशी खुदाय॥”

7. निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कबीर सच्चे अर्थों में एक निर्भीक मानवतावादी समाज-सुधारक थे। उनकी खण्डनात्मक शैली का मूल उद्देश्य मानवता का संदेश देना था। उन्होंने तत्कालीन मुगल शासन के भय से मुक्त होकर अपनी आवाज़ बुलंद की। कबीर का उद्देश्य किसी का अपमान करना नहीं, बल्कि एक सभ्य और समतामूलक समाज की स्थापना करना था। उनके साहित्य में सामाजिक संवेदना और मानवीय कल्याण के दर्शन होते हैं। कबीर का योगदान हमारे सभ्य समाज के इतिहास में सदैव अविस्मरणीय रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. दास, श्यामसुन्दर (सं.), कबीर ग्रन्थावली, इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन (वितरण), संस्करण 2009, पृ. 15.



2. द्विवेदी, हजारीप्रसाद, कबीर, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., संस्करण 2020, पृ. 146, 170.
3. शुक्ल, रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नई दिल्ली: नमन प्रकाशन, संस्करण 2002.
4. सिंह, बच्चन, हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., संस्करण 2017, पृ. 83-84.
5. स्नातक, विजयेंद्र (सं.), कबीर, दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., संस्करण 2019, पृ. 238.